



दाक्षी साहित्य परिषद्

काव्य संकलन



गाथाप्रभा

दाक्षी साहित्य परिषद् पत्रिका



गाथाप्रभा

पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति
(प्रभु के काव्य को देखो, न मरता है न कभी पुराना होता है ।)
-अथर्ववेद

शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्
(शब्द और अर्थ का समन्वय काव्य है ।)
-भामह

संक्षेपात् वाक्यमिष्टार्थव्यवच्छिन्ना, पदावली काव्यम्
(संक्षेप से जो वाक्य होता है, उसका नाम काव्य है ।)
-अग्नि पुराण

शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली
(इष्ट अर्थ से युक्त पदावली ही काव्य शरीर है ।)
-दंडी

काव्य शब्दोयं गुणलंकार संस्कृतयोः शब्दार्थयोर्वर्तते
(गुण और अलंकार से युक्त शब्दार्थ को काव्य कहते हैं ।)
-आचार्य वामन

गुणवदलङ्कृतंच काव्यम्
(गुणों और अलंकारों से युक्त वाक्य का नाम काव्य है ।)
-राजशेखर

© सर्वाधिकार सुरक्षित दाक्षी ट्रस्ट

"प्रकाशक की पूर्व लिखित अनुमति के बिना इस पुस्तक के किसी भी भाग (पूर्ण अथवा आंशिक) का पुनःप्रकाशन, कॉपी, स्कैन, पुनः प्राप्त करने की सम्भावना वाली व्यवस्था में संग्रह, रिकार्डिंग अथवा किसी भी अन्य रूप में अथवा किसी भी साधन से, इलैक्ट्रॉनिक और मैकैनिकल साधनों सहित परन्तु केवल इन साधनों तक ही सीमित नहीं और भी किसी अन्य साधन से अग्रसह करना, प्रतिबन्धित है।"

प्रकाशक:

दाक्षी प्रकाशन

दाक्षी ट्रस्ट का प्रकाशन विभाग, द्वारका सेक्टर २३ ब, नई दिल्ली, ११००७७

भारत टेली: +91 7042262289

ई-मेल: dakshimovement108@gmail.com

वेब साईट: www.dakshimovement.in

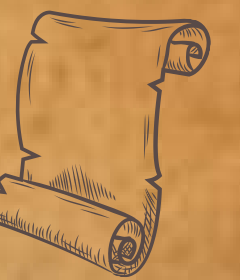
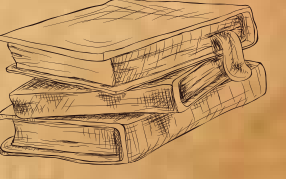
ISBN: 978-81-994388-4-2



अनुक्रम



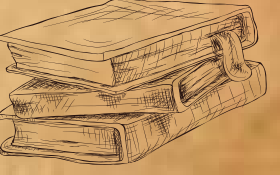
अनुक्रम	5.
निदेशक की कलम से	6.
संपादकीय	7.
श्रीगणेशचरितम	8.
शारदा स्तुति	10.
सर्वम खल्विदं ब्रह्म	11.
प्रलय के द्वार पर	12.
स्वतंत्रता और साहित्यकार	13.
गुरु	15.
एक आखिरी खत	16.
मैं भारत	17.
पिता	18.
कलियुग और जीवन	19.
संस्कृत हमारी आत्मा	21.
दीपावली विशेष	22.
काव्य गोष्ठियां	28.
काव्य प्रतियोगिता	29.
दाक्षी परिचय	30.



निदेशक की कलम से



दाक्षी साहित्य परिषद् की काव्य संकलन पत्रिका "गाथाप्रभा" का प्रथम अंक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मन में गहन संतोष और नवप्रेरणा का संचार हो रहा है। यह अंक हमारे रचनात्मक प्रयासों के साथ-साथ उस दृष्टि का मूर्त रूप भी है जिसके लिए परिषद् की स्थापना हुई सृजन के माध्यम से भारतीय चिंतन, संवेदना और सौंदर्यबोध को वैश्विक विमर्श में प्रतिष्ठित करना।

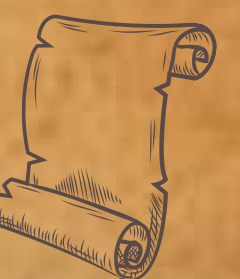


भारतीय ज्ञान परंपरा में साहित्य केवल अभिव्यक्ति नहीं, साधना का मार्ग रहा है। ऋषियों ने वाणी को ब्रह्म का स्वरूप कहा, कवियों ने शब्द को आत्मा की गति माना, और दार्शनिकों ने साहित्य को लोकमंगल का माध्यम बताया। वेद-उपनिषदों की आत्मबल से लेकर कालिदास, भवभूति, तुलसी और रवींद्र के रसस्रोत तक हमारी परंपरा का प्रतिपाद्य एक ही रहा है: सत्य, सौंदर्य और करुणा की अनुभूति के द्वारा जीवन को व्यापक बनाना।

आज जब आधुनिक समय में विचार और अनुभव की परिधियाँ बदल रही हैं, तब साहित्य को केवल अभिव्यक्ति नहीं बल्कि आत्मअन्वेषण का साधन बनाना हमारा लक्ष्य है। "गाथाप्रभा" इसी आत्मसंवाद की यात्रा का आरंभ है एक ऐसा मंच जहाँ परंपरा और नव्यता, स्मृति और सृजन, दोनों साथ-साथ प्रवाहित हों।

हमारा विश्वास है कि यह पत्रिका पाठकों और सर्जकों दोनों के भीतर नयी चेतना और नये प्रश्नों का संचार करेगी, और भारतीय साहित्य की जीवंत परंपरा को आगे बढ़ाने में अपना योगदान देगी।

- अक्षित कुमार भदौरिया



संपादकीय



साहित्य मेरे लिए केवल कहानियों, कविताओं या नाटकों का संग्रह नहीं है। यह मानव समाज की आत्मा है — उसके विचारों, भावनाओं, आस्थाओं और संघर्षों का सजीव रूप। जिस प्रकार समाज अपने परिवेश, दर्शन और इतिहास से बनता है, उसी प्रकार साहित्य उन सबका जीवंत प्रतिबिम्ब है।

साहित्य मनुष्य के विचारों का ऐसा प्रवाह है, जो कभी परंपरा को पोषित करता है, तो कभी विद्रोह का शंखनाद बनता है। यही उसकी सबसे बड़ी शक्ति है : वह संजो भी सकता है और तोड़ भी सकता है। जब समाज अपने आदर्शों और मूल्यों पर टिका होता है, तब साहित्य उन परंपराओं को पुष्ट करता है, उन्हें शाश्वत बनाता है। किंतु जब वही समाज अन्याय, अंधविश्वास या रूढ़ि में जकड़ जाता है, तब यही साहित्य परिवर्तन का सबसे बड़ा शस्त्र बन जाता है। उसकी कलम से उठी एक पंक्ति भी किसी क्रांति की शुरुआत बन सकती है।

यही द्वंद्व, परंपरा और विद्रोह का, साहित्य को जीवंत बनाता है। वह न केवल अपने समय का साक्षी है, बल्कि आने वाले युगों के लिए पथप्रदर्शक भी। इसलिए साहित्य के माध्यम से समाज स्वयं को निरंतर परिभाषित और परिष्कृत करता रहता है।

और अंततः, जो लोग साहित्य रचते हैं, वे किसी समाज के सबसे मौन किन्तु सबसे गहरे निर्माता होते हैं। उनके शब्द समाज की दिशा बदल सकते हैं, किसी युग की चेतना को नया आकार दे सकते हैं। ऐसे रचनाकारों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना केवल एक औपचारिकता नहीं, बल्कि सभ्यता के प्रति हमारी जिम्मेदारी है।

मैं दाक्षी के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता प्रकट करती हूँ कि उसने 'गाथाप्रभा' जैसी पत्रिका के माध्यम से साहित्य के इस उत्सव को मनाने की पहल की है। मैं आशा करती हूँ कि प्रत्येक लेखक इस यात्रा का भाग बनेगा और अपने शब्दों से इस प्रकाश को और विस्तृत करेगा।

- कृतिका रस्तोगी

श्रीगणेशचरितम्

आदि में अनन्त शून्य था,
जहाँ न ध्वनि थी, न गति, न लय ।
वहाँ मातृ-पार्वती के तप का कम्पन उठा—
जैसे शिलाओं में छुपा अमृत-निनाद ।

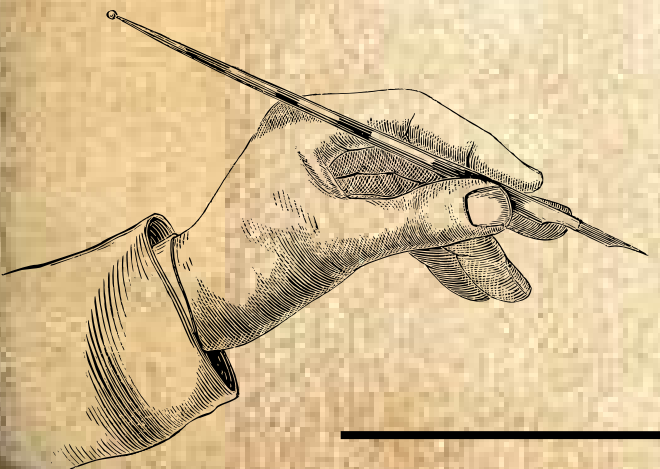
शुभ्र स्नानधारा से गुथित मृत्तिका,
आस्था के कर-तन्तुओं से गढ़ा बालक,
श्वासों की प्राण-सिक्ति से जागा,
और नयनों में झलक पड़ा विश्व का प्रथम आलोक ।

बाल-लीला में वही अज्ञात रक्षा-व्रती—
जिसने कैलास के द्वार पर स्थिर होकर कहा,
"नवजीवन से उद्भूत हूँ मैं,
मातृ-आदेश ही है मेरा शास्त्र ।"

परम्परा के वज्र से टकरा हुआ
वज्रतुल्य त्रिशूल,
कटा शिर—किन्तु कटी नहीं थी सत्ता,
क्योंकि ब्रह्माण्ड का विधान,
देवताओं के सम्मुख प्रकट था ।

गज-मुख से अलंकृत हुआ वह शिर,
और जन्मा विघ्ननायक,
जिसकी करुणा से शान्त होते
संसार के असंख्य संताप ।

विद्या की आराधना में वह स्वयं आदि-शब्द,
अक्षरों की जड़, मनीषा का प्रथम बीज ।
व्याकरण के वेताल में गूँजते हैं उनके स्वर,
समीकरणों में छिपा है उनका चिर-आशीष ।



महाभारत का लेखन जब व्यास के ज्ञान से उमड़ा,
तब वह एकाग्र लिपिकार बने—

जहाँ शर्त थी बुद्धि की
और प्रतीक्षा थी अनन्त धैर्य की।

उनके हस्ताक्षर ही बने
इतिहास के महाग्रन्थ।

वे केवल देवता नहीं—

मानव-मन के गुप्त सूत्र हैं।

शक्ति का वलय, बुद्धि का आलोक,
प्रेरणा का अनन्त आधार।

हर आरम्भ में स्मरण उनका क्यों?

क्योंकि वे ही "प्रारम्भ का तत्त्व" हैं,

जहाँ बिना गणपति स्मरण के

सृष्टि भी अधूरी मानी जाए।

आज भी जब दीपक जलता है,

जब विद्यार्थी कलम उठाता है,

जब पथिक अनजाने पथ पर निकलता है,

जब कलाकार राग छेड़ता है—

तब अदृश्य करों से

गणपति स्पर्श करते हैं आत्मा को।

श्रीगणेश—

तुम्हारा चरित न समय में सीमित है,

न शब्दों में समाहित।

तुम हो—

आदि और अनन्त के मध्य की पुलक-रेखा,

शून्य में अंकित पूर्णता का अक्षर,

नाद में छुपा मौन, मौन में छुपा नाद।

तुम हो—

प्रेरणा की आद्यशक्ति, भक्ति की परमशान्ति,

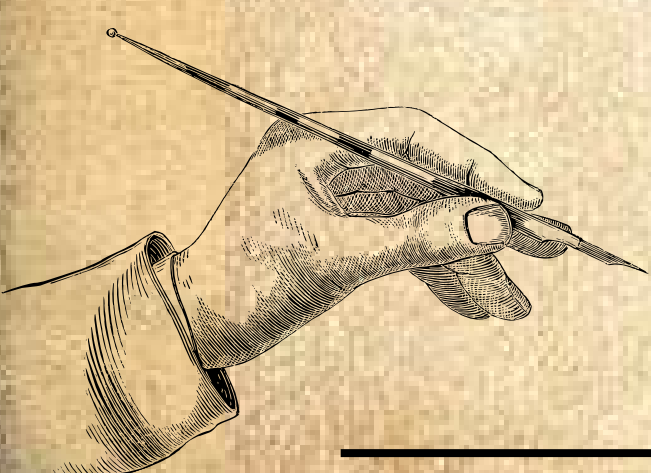
ज्ञान की अनन्त गंगा।

वन्दन है तुम्हें—

हे विघ्नविनाशक, हे बुद्धिनायक,

हे अनन्तचरित के स्वामी गणेश!

~ मोनिका दाधीच



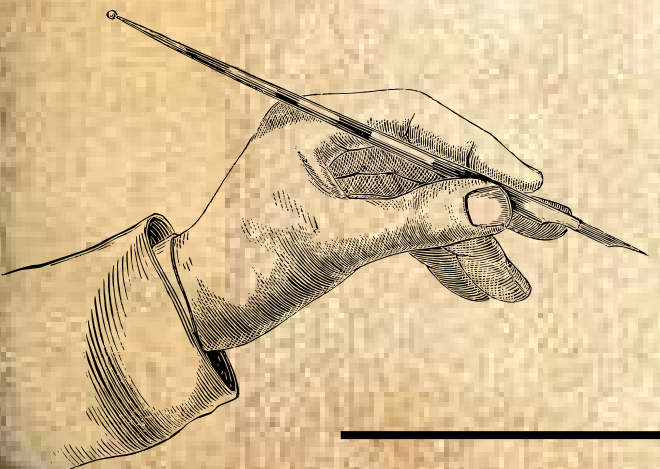
शारदा स्तुति



जय जय जय जय ज्ञानप्रदायिनी
जय जय जय जय हंसवाहिनी
जय जय जय जगदंब भवानी,
जय जय ब्रह्मा सत्यार्धांगनी,
जय हो तुम्हारी वीणावादिनी,
भवसागर के तल में फसा मैं,
भांग मनुष्य हूं जल में फसा मैं,
तुम बुद्धि का कूर्म हो देवी,
मैं जड़बुद्धि स्वा का सेवी,
हे मैया तुम पार लगाओ,
दे विवेक मोहे धन्य बनाओ,
ज्ञान का गौरव मुझमें जगाओ,
तुम तो श्वेतांबरी शांति प्रतीका,
तुम ही भवानी ब्रह्मस्वरूपा,
तुम ही हो सब वेद की वाणी,
जय जय जय जगदंब भवानी,
जय जय जय जय ज्ञानप्रदायिनी ।

तुम हमको भक्ति दो माता,
एकाग्रता की शक्ति दो माता,
धीर, ध्यान और धैर्य भी देना,
श्रवण, वाणी और शौर्य भी देना,
जल बिन मछली तेर न पाती,
सो मोहे पंख गहड़ओ दाति,
तुम तो मां हो हे महादानी,
जय जय जय जगदंब भवानी,
जय जय जय जय ज्ञानप्रदायिनी ।

-- अक्षित कुमार भदौरिया



"सर्व खल्विदं ब्रह्म"

(छांदोग्य उपनिषद् ३.१४.१)

बिन्दु-बिन्दु में ब्रह्म समाहित, चेतना का मूल रूप,
प्रत्येक अणु में वही तत्त्व, वही अदृश्य स्वरूप ।
नहीं कहीं कुछ अन्य या व्यर्थ, नहीं कोई पराया भाग,
सकल सृष्टि में व्याप्त है वह, जो है सत्य का अनुराग ।

तरु की निस्तब्ध छाया में,
विहग के गान की माया में,
संध्या के नीरव क्षण-क्षण में,
ब्रह्म ही है, रचयिता मन में ।

विरह में भी एकत्व की अनुभूति,
द्वैत में भी अद्वैत की सजीव गूंज,
क्योंकि यह सम्पूर्ण विश्व,
ब्रह्म की ही अभिव्यक्ति, उसका पूर्ण रूप ।

नवनीत घट में जो मन आलोकित,
वह क्षणिक नहीं, न सीमित सार,
वह तत्त्व है जो सर्वत्र प्रवहमान,
जैसे काल से परे हो उसका विस्तार ।

यह तत्त्व न केवल जानने का विषय,
अपितु अनुभव का ही अंतिम विश्रय,
जो देखे एकता सम्पूर्ण में,
वही हो समरस उस ब्रह्मपूर्ण में ।

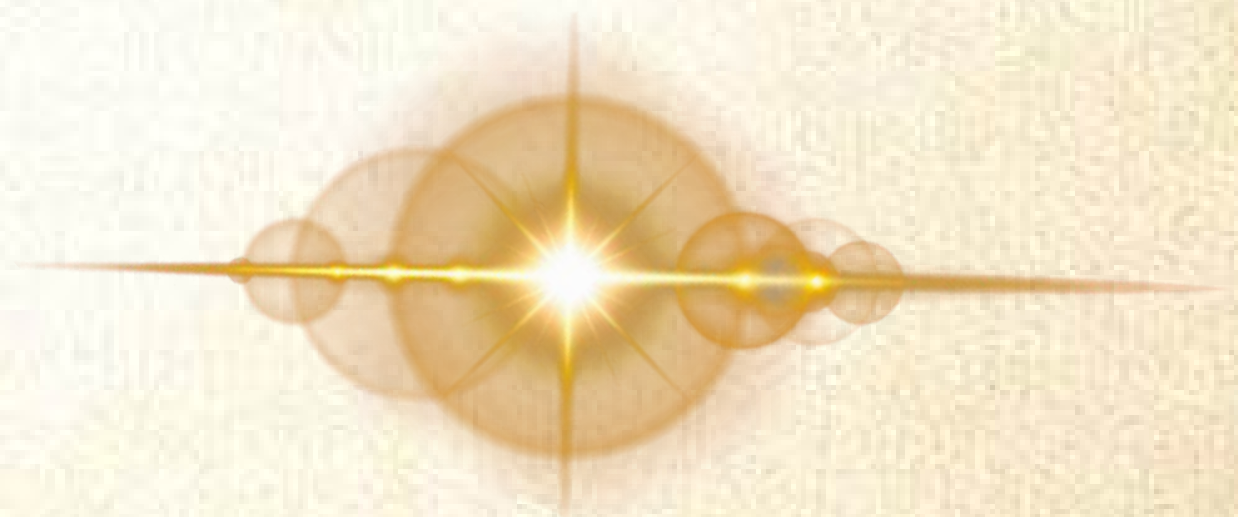
मृत्तिका की सौम्यता में,
जलकण की निर्मलता में,
अग्नि की ज्वाला, वायु की गति-
सबमें है ब्रह्म की समता सदा वितरित ।

ना कोई बाहर, ना भीतर अंतर,
हर कण में गूंजता है वही तत्त्व मंत्र,
जो इस एकत्व को हृदय से धारण करे,
वह स्वयं ब्रह्म के स्वरूप को चरितार्थ करे ।

जहाँ बुद्धि रुक जाती है,
वहाँ श्रद्धा बोल उठती है,
जहाँ इन्द्रियाँ सीमित हों,
वहाँ आत्मा ब्रह्म से जुड़ती है ।

- प्राची दाधीच

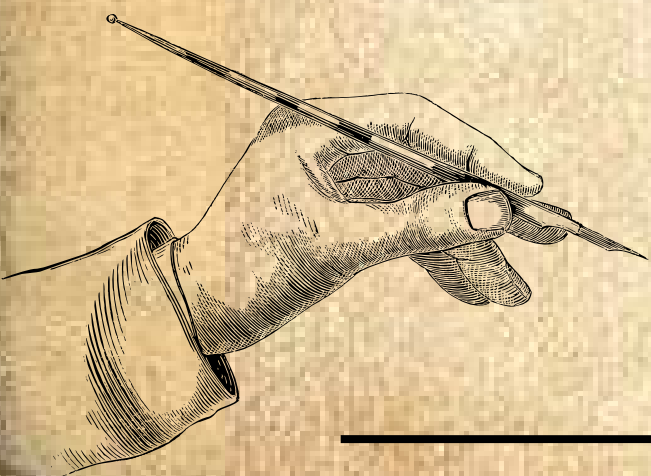
यह दृश्य जगत जो विविध प्रतीत होता,
वास्तव में एक ही तत्त्व का प्रतिबिम्ब होता ।
न कुछ इसके बाहर, न भीतर भिन्न,
सब कुछ है ब्रह्म-अविभाज्य, सुस्पष्ट, चिरव्याप्त ।



प्रलय के द्वार पर

समय रहते क्यों ना बचा लें हम,
इस प्रकृति को, इस धरती को!
वरना आने वाला समय कुछ ऐसा होगा!
मुँह पर मास्क और कंधों पर ऑक्सीजन सिलेंडर होगा!
अगर काट दिए जाएंगे सारे जंगल तो जीना मुश्किल हो जाएगा!
हवा बिकेगी पैसों में, हाहाकार मच जाएगा!
नदी, झील, तालाब और झरने जब सब गंदे हो जाएंगे,
तो पीने वाला पानी हम सब और कहां से लाएंगे!
प्रलय मचेगी इस धरती पर , सब त्राहि - त्राहि चिल्लाएंगे !
फिर रोने के सिवा हम और कुछ भी नहीं कर पाएंगे!
आओ आज से मिल कर ये कसम खाएं!
पेड़ लगाएं और पर्यावरण को बचाएं!!

— अनिकेत नारायण



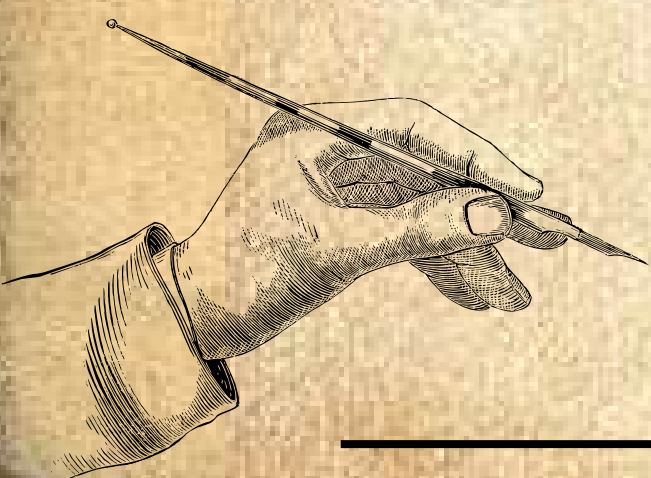
स्वतंत्रता और साहित्यकार

अत्याचार जब हृद से बढ़ जाता है,
वह शोषित को भयमुक्त, निडर और अति बलवान ही बनाता है,
पतन होता है तानाशाही का,
जब मानव अपने अधिकार की आवाज़ उठाता है।

स्वतंत्रता का स्वप्न हर हृदय में धड़क रहा था,
क्रांति का जोश नवयुवकों में धधक रहा था,
महाभारत का रण तो अब होना ही था,
पौरुष का महायज्ञ तो अब होना ही था।
महाभारत के रण से भला वीर कहां घबराता है?
समर्पित कर देता है स्वयं को आहुति के रूप में,
पौरुष के महायज्ञ से भला वीर कहां कतराता है?

इस धर्मयुद्ध से
भला साहित्यकार कैसे पीछे रहते?
कैसे रह पाते वो पीड़ा से विमुख,
भला कैसे वो आँखें मीचे रहते ?

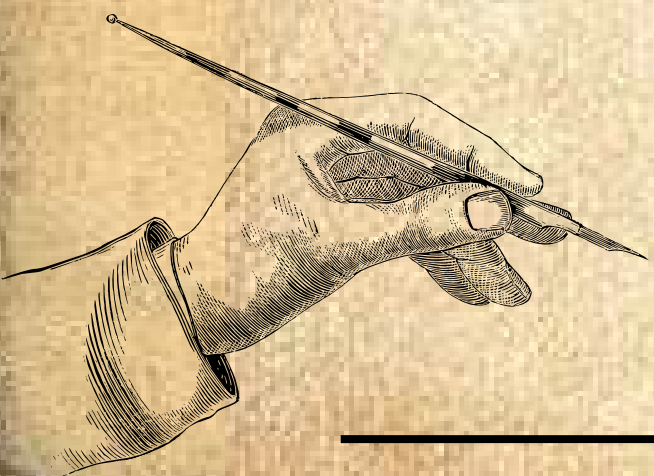
कलम सम्राटों ने अपनी अपनी कलम उठाई,
अपने शब्दों से भारत में नवचेतना की लौ जलाई।
प्रशासन से कठिन प्रश्न उत्तर की बारी थी,
साफ़ सटीक शब्दों में स्वराज की मांग हमारी थी!



कलम को बनाया शस्त्र, वीरों ने युद्ध का उद्घोष किया,
स्वतंत्रता का संकल्प कर, स्याही का वीर तिलक किया,
उठाई कलम और सबने भारत का गीत महान लिखा,
भारत का जय जयकार लिखा
भारत का जय जयकार लिखा!
इसी दौर में वंदे मातरम लिखा गया,
इस पावन भूमि का वंदन किया गया,
टैगोर द्वारा नए भारत का प्रारूप दिया गया
वीरों द्वारा कभी स्याही से कभी अपने लहू से इस भूमि का अभिषेक किया गया,
इस भूमि का वंदन किया गया
इस भूमि का वंदन किया गया ।

जब ना मिल सके कागज़ जेल में,
तब दीवारों को ही कागज़ बनाया गया
आज़ादी के बुलंद इरादों को स्याही
और जेल की सलाखों को कलम बनाया गया,
सावरकर ने उठाई कलम और कैदखाने की दीवार पर भी भारत का गीत महान लिखा
भारत का जय जयकार लिखा
भारत का जय जयकार लिखा!

— - कृतिका रस्तोगी



गुरु

मैं बैठा कविता लिखने को, अक्षर न लिख पाया ।
सबसे पहले उपमा को था, सूर्य ध्यान में आया ।।

गुरु का तेज सूर्य से ज़्यादा, पर उनमें है लपट कहाँ?
फिर मैं गया लेने को उपमा, रहता महान मयंक जहाँ ।।

शीतलता तो फिर भी देखो, गुरु में होती ज़्यादा है ।
पर चंद्रमा कहाँ पक्ष, कृष्ण के में टिक पाता है ।।

चंद्रलोक से निकला मैं फिर, पहुँचा मैं तारों के पास ।
वहाँ मिला ध्रुवराज से मैं, जो थे तारों के सरताज ।।

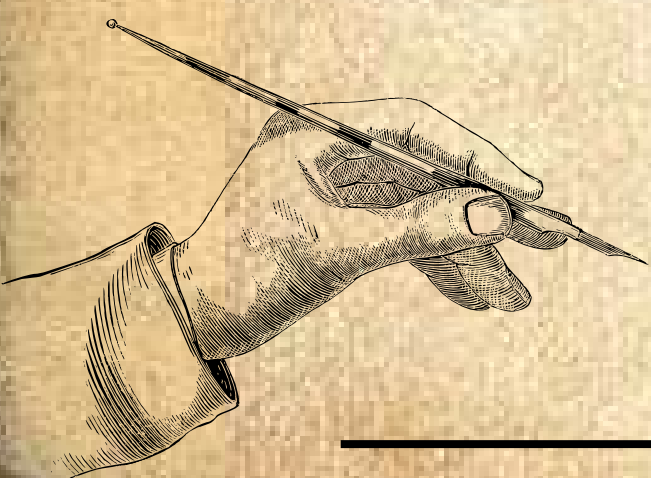
दीपित रहते सदैव है जो, गुरु से शासक कहाँ है वो?
फिर मैं गया वहाँ जहाँ, रहते स्वर्ग शासक हैं जो ।।

उनकी भी उपमा नहीं, गुरु से कर सकते हैं ।
मेरे महान गुरु के आगे, इंद्रादि भी झुकते हैं ।।

शायद इसीलिए उपमा को, कोई नहीं मिल पाया ।
जिसके पास गया मैं उसको, गुरु से कम है पाया ।।

मैं बैठा कविता लिखने को, अक्षर न लिख पाया ।
सबसे पहले उपमा को था, सूर्य ध्यान में आया ।।

~ कर्तव्य प्रताप सिंह(जय)



एक आखरी खत

माँ मुझसे एक वादा कर
की मेरी अर्थी देख अश्रु न बहाएगी
अरे माँ!! तेरा ये बेटा तो
मरके भी अमर हो गया
इसे चिता की ये अग्नि क्या जलाएगी
माँ सुन,
बहन से कहना की रोए ना
जो अगली राखी पर उसे मैं ना मिलूँ,
भाई से कहना उदास ना हो
जो आगे से खेलों में उससे मैं न लड़ूँ,
पापा से कहना नाराज़ ना हों
जो उनके बुढ़ापे का सहारा ना बनूँ,
मेरी पत्नी से कहना टूटे ना
जो अगली तीज पर मैं ना दिखूँ,
और माँ, माफ़ करना मुझे
मैं तेरी ममता का कर्ज़ ना चुका पाया
लेकिन मुझे यकीन है, की तुझे गर्व होगा,
की तेरा ये बेटा देश के काम आया

~ दीक्षा रानी



मैं भारत

मैं वह बच्चा हूँ
जिसे औपनिवेशिक कोड़ों ने पालना झुलाया,
और जिसकी लोरी
बारूद और रोते बच्चों की चीखों में डूबी थी।

मैं वह जवान हूँ
जिसकी पसलियों में गोलियाँ
उतरकर भी सीना ध्वज से ढका रहा।

मैं वह माँ हूँ
जिसने बेटे को श्मशान भेजा,
और अगले ही दिन दूसरे बेटे को रणभूमि।

मैं वह फकीर हूँ
जिसके पैरों के छाले
इस मिट्टी के नक्शे में बदल गए।

आज मैं आज़ाद हूँ-
पर मेरी हड्डियों में अब भी खून की गंध है,
मेरे सपनों में
अब भी जलियांवाला बाघ के नरसंहार का धुआँ है।

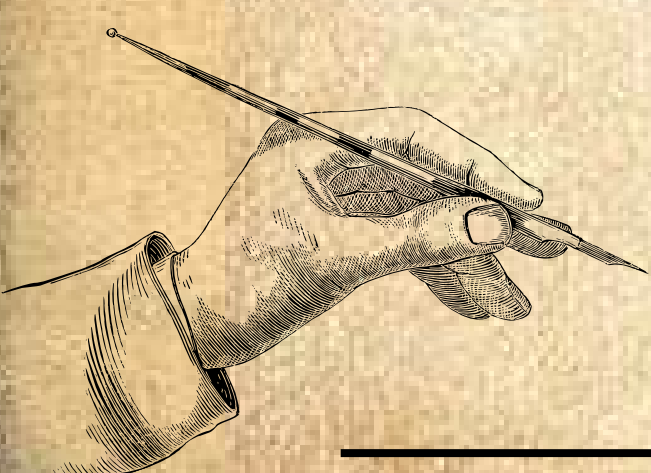
और मैं कहता हूँ -
मुझसे प्रेम आसान नहीं,
मुझे बचाना कठिन है।

अगर तुम मुझे चाहते हो,
तो सिर्फ गीत मत गाओ,
अपनी नसों में बारूद भरो और तैयार रहो -

क्योंकि जिस दिन मैं फिर से जंजीरों में जकड़ा,
उस दिन मेरी नदियाँ लाल बहेंगी,
मेरे पर्वत गूँजेंगे शोक में, और मैं-

अपने ही बच्चों को पुकारूँगा युद्ध में...
मेरे लिए,
अपने लिए,
अमरता के लिए।

~ मोनिका दाधीच



पिता

पिता
अभिभावक है,
जो स्नेह दिखाते और
कभी कठोरता ज़रा सी ।

पिता शिक्षक है,
जो मार्ग दिखाते और
अँधियारे में लौ आशा की ।

पिता दोस्त है,
जो उड़ना सिखाते और
गलतियों से न डरना भी ।

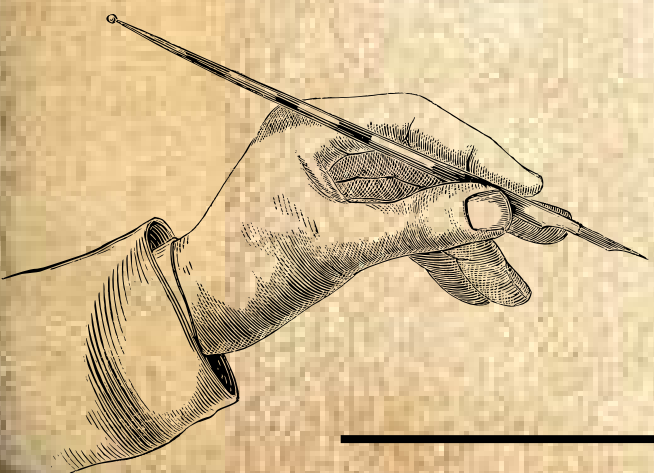
पिता जादूगर है,
जो खुद में समाते सारे राज़ और
ढेरों ग़म और खुशियां भी ।

पिता अविस्तृत है ,
जो शब्दों से न विस्तृत हो और
न गाया जा पाए जिन्हें गायन में भी ।

पिता राज़ है ,
जो परेशानियों को छुपाते हैं
और कभी न खोलते आंसुओं का भंडार भी ।

पिता वो शब्द है ,
जो थकान में ऊर्जा है
और है खुशी में किलकार भी ।

~ निहारिका



कलियुग और जीवन

जीवन स्थिरता पूर्ण शांति का नाम नहीं हो सकता ...

क्योंकि आज जिंदगी हर पल नई लड़ाई है....

मगर ये लड़ाई नैतिकता विहीन है,
शायद इसीलिए, शहरी चका चौंद में भी हर दिल में गहरी
तन्हाई है!

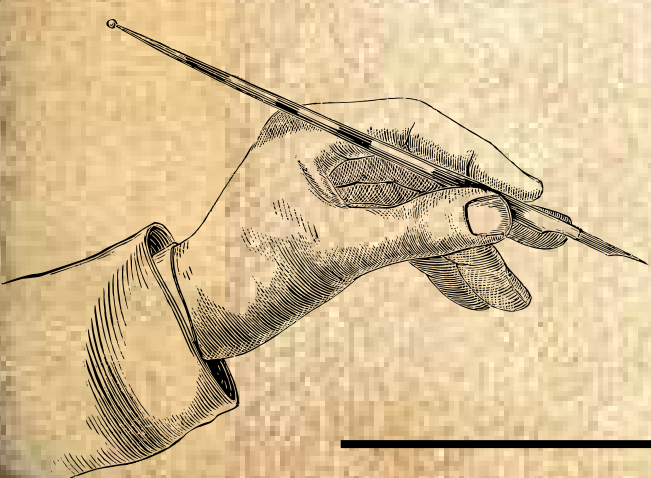
बिक जाते हैं जहां जिस्म चंद सिक्कों के दाम
तो यहां क्या आस्था, मूल्यों और उचित अनुचित का
व्यापार नहीं होता होगा?
क्या पता बेचने लगे हम अपनी आत्माओं को भी जल्द
ही....

खो जाएंगे गहरे अंधकार में यूं तो, क्या इस बात का
एहसास किसी को भी नहीं होता होगा?

जब ' विलास ' एकमात्र उद्देश्य हो जाए
भला त्याग कैसे सीखे कोई?

जब चंचल मन के समक्ष झुककर माया में डूबना प्रवृत्ति हो
जाए

तब भला मन को कैसे साधे कोई?



क्यों और कैसे ये विश्वखलता है उत्पन्न हुई....

है इसका भला उत्तर कहां?

आदत डाल लें क्या, हर चौराहे पर इंसान की नीलामी देखने
की...? रिश्ते नातों को धागों की तरह टूटते देखने की?

या फिर है इस सबका कोई समाधान यहां?

आज जीवन मर्यादित पुरुषों के बीच की लड़ाई नहीं है...

ये बराबरी का युद्ध नहीं है...

यहां नियम नहीं हैं...

कायदे - कानून नहीं हैं !

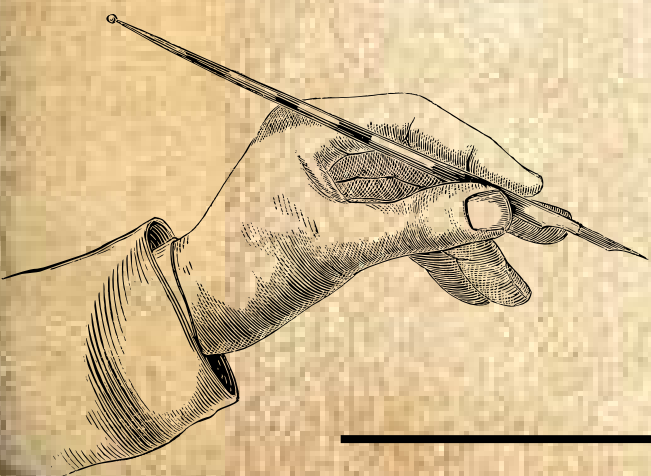
आज जीवन मत्स्य न्याय है.... ताकत की घिनौनी छीना झपटी
है....

आंख उठा कर देखने पर चारों ओर केवल त्राहिमाम त्राहिमाम
है...!!

शायद यही इस युग की सच्चाई है
सही गलत का भेद जो भूल बैठे हम
शायद इसीलिए हमारे हृदय में गहरी तन्हाई है!

— कृतिका

रस्तोगी



संस्कृत – हमारी आत्मा

नभ-सा असीम, धरती-सा गहरा,
संस्कृत है अपना गौरव सुनहरा ।
ऋषियों की तप, साधना का फल,
हर शब्द इसका, अमृत सा पल ।

वेदों की गूंज, पुराणों की कथा,
सीख दे सदा – सत्य और प्रथा ।
नदियों सी निर्मल, पर्वत-सी स्थिर,
संस्कृत है भारत का धड़कता दिल ।

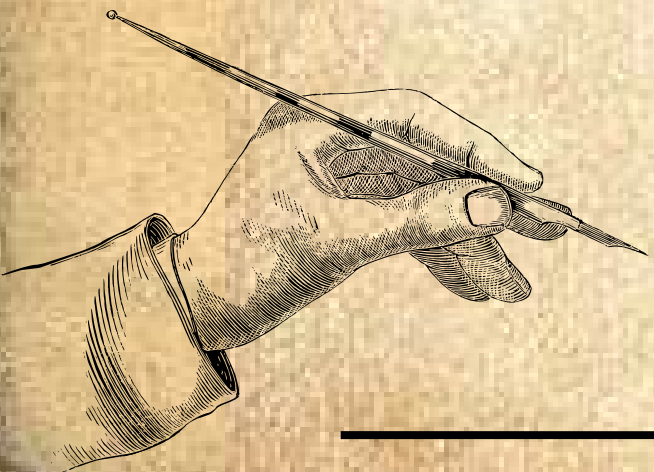
आज के युग में भूल न जाएं,
इसकी मिठास को फिर अपनाएं ।
तकनीक के संग भी स्वर ये गूंजे,
दुनिया के कोने-कोने में पहुंचें ।

संस्कृत दिवस है वचन हमारा,
संभालेंगे इस धरोहर का प्याला ।
कल की पीढ़ी भी कह उठे गर्व से,
"संस्कृतं मम जीवनस्य हृदयस्थे!"

स्वर में जैसे गंगाजल बहे,
अक्षर जैसे मोती चमकते रहे ।
ऋषि-वन में जन्मी, तप से पली,
ज्ञान-दीप की ज्योति, जग में जली ।

युग बदले, पर सुर न बदले इसके,
यह तो है प्राण, हमारे हृदय के ।
आज करें हम संकल्प नया,
हर जन बोले, यह सुर अमृत-सा ।

संस्कृत दिवस की यह है पुकार,
जग में गूंजे भारत का सार ।
"संस्कृतं अमृतं" गाए संसार,
अक्षय रहे यह भाषा अपार ।



दीपावली

देव भाटिया

हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्विद्यालय



आया पर्व दीपावली का, देखो कैसा प्रकाश है।
हर ओर खुशी फैली, मन में नया उजास है।
यह बस रोशनी नहीं, यह है जीवन का सार,
संस्कृति, श्रद्धा और विज्ञान का अद्भुत व्यवहार।

गणेश-लक्ष्मी पूजन की महत्ता
सबसे पहले गणपति को, आओ शीश नवाँ,
बुद्धि के वे देवता हैं, हर बाधा हटाँ।
शुभ-लाभ के दाता, विघ्न विनाशक नाम है,
हर कार्य से पहले पूजना, यही प्रथम काम है।

फिर माँ लक्ष्मी का होता है प्रेम से आह्वान,
धन, समृद्धि, ऐश्वर्य दें, करें हमारा कल्याण।
मिट्टी के दीप जलाँ, करें आरती भाव से,
अँधेरा हटे मन का, प्रकाश भरे स्वभाव से।

कुबेर भी पूजे जाते, धन का अधिपति महान,
तिजोरी में पूजा होती, कामना है सुखदान।
मिठाई, फूल, बताशे, प्रसाद की भेट धरें,
मंत्रों के उच्चारण से, सकारात्मकता भरें।

मगर यह पर्व केवल भक्ति का नहीं, समझो ज्ञान को,
जुड़ा है यह मौसम के बदलाव और स्वच्छता के मान को।
सर्दी से पहले, जब कीटाणु हैं फैलते सारे,
घर-घर में सफाई से, रोग भागते बेचारे।

तेल के दीपक जलते, वातावरण को शोधते हैं,
जड़ी-बूटियों का धुँआ भी, कीटों को बोधते हैं।
हवा में शुद्धि आती, जब घृत और कपूर जले,
यह प्राचीन विज्ञान है, जो स्वास्थ्य की राह चले।

आतिशबाजी से पहले, मिट्टी के दीपक को जलाओ,
पर्यावरण को बचाओ, संदेश यह फैलाओ।
भीतर का अंधकार मिटे, ज्ञान का दीप जले,
यह त्योहार है सार्थक, जो हर पीढ़ी चले।

तो दीपावली मनाओ, दीप जलाओ और पूजन करो,
बुराई पे अच्छाई की, विजय का स्मरण करो।
श्रद्धा और तर्क से, हर खुशी को पाओ,
मंगलमय हो दीपावली, यह गीत तुम गाओ।

गोवर्धन पूजा — वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं प्राचीन परम्परा

संध्या शर्मा

MA 1st year

गोवर्धन पूजा, जिसे अन्नकूट के नाम से भी जाना जाता है, भारतीय संस्कृति के सबसे अनूठे और प्रतीकात्मक त्योहारों में से एक है। यह केवल एक धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि मानव-मन के अहंकार का प्रतीक और प्रकृति के साथ हमारे संबंध को समझने का एक गहरा दार्शनिक तथा मनोवैज्ञानिक आधार प्रस्तुत करता है। किसी भी त्योहार का वास्तविक मूल्य उसके आंतरिक संदेश में निहित होता है, न कि केवल बाहरी रस्मों में। गोवर्धन पूजा का सार भी मूर्तियों की नहीं, बल्कि प्रकृति की पूजा में है। यह पर्व हमें यह सोचने पर विवश करता है कि क्या हम आज भी सत्य की पूजा कर रहे हैं, या मात्र शक्ति की चाटुकारिता में लगे हुए हैं।

गोवर्धन पर्वत को उठाना श्रीकृष्ण का कोई भौतिक प्रदर्शन नहीं था, बल्कि वह उस आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक था जो सत्य के पक्ष में खड़ी होती है, चाहे वह सत्ता या परंपरा के विरुद्ध ही क्यों न हो। यही वह तार्किक और बौद्धिक आधार है, जिस पर इस पर्व की उपयोगिता आधुनिक समाज के लिए स्थापित होती है।

गोवर्धन कथा का केंद्रीय संघर्ष इंद्र के अहंकार और कृष्ण की तर्कसंगतता के बीच है। यह कथा बाह्य शक्ति की दासता से मुक्त होकर आंतरिक सत्य को स्वीकार करने की ओर हमारी यात्रा का प्रतीक है। कथा का प्रारंभिक प्रसंग है — इंद्र की पूजा। इंद्र वर्षा और शक्ति के देवता थे, और लोग भय तथा लोभ के कारण उनकी पूजा करते थे।

इंद्र इस कथा में मानव-अहंकार का प्रतीक हैं। यह वह अहंकार है जो मानता है कि "मैं ही सब कुछ हूँ, मेरी शक्ति से ही सृष्टि चल रही है, और बाकी सब मेरे अधीन हैं।" आज के आधुनिक समाज में भी यही 'इंद्र' हावी है — भौतिकवाद, तकनीकी घमंड, पद और संपत्ति की आसक्ति। हम भौतिक सुख-सुविधाओं की शक्ति के सामने सिर झुकाते हैं। हम मानते हैं कि हमारे बैंक बैलेंस या सोशल मीडिया फॉलोअर्स ही हमें सुरक्षित रखेंगे। हम उस बाहरी शक्ति की पूजा करते हैं जो हमें भय दिखाती है या लालच देती है।

परंतु इंद्र कोई बाहरी देवता नहीं, बल्कि हमारे अहंकार से भरा वह मन है, जो पूजा, दिखावे और परिणाम की लालसा रखता है। यह डर और लालच पर आधारित पूजा थी। आधुनिक संदर्भ में यह वही मानसिकता है जो केवल परिणाम की पूजा करती है — पैसा, पद, सफलता। हम सोचते हैं कि यदि हम "शक्तिशाली" लोगों या प्रणालियों की चापलूसी करेंगे, तो हमें लाभ मिलेगा।

इंद्र की पूजा यही स्वार्थ-केंद्रित जीवनशैली है।

कृष्ण इसके विपरीत तर्क, विवेक और वैज्ञानिक समझ का प्रतिनिधित्व करते हैं। उन्होंने कहा कि पूजा उसकी होनी चाहिए जो वास्तव में हमारा पोषण करता है — गोवर्धन पर्वत, जो गायों को चारा और गोकुलवासियों को वर्षा से सुरक्षा प्रदान करता था।

कृष्ण का संदेश स्पष्ट था — जो हमें जीवन देता है, जो हमारे अस्तित्व का आधार है, उसे पहचानो और उसका सम्मान करो। यह मूर्खता है कि हम उस चीज़ की पूजा करें जो केवल दिखावा है या अस्थायी सत्ता का प्रतीक।



हमें यह पहचानना चाहिए कि हमारे जीवन का सच्चा आधार क्या है — प्रकृति, भोजन, आंतरिक शांति — और अहंकार की शक्ति, जैसे दिखावा या बाह्य सत्ता, को पूजना बंद करना चाहिए। यह हमें सोचने पर मजबूर करता है कि क्या हमारी परंपराएँ विवेक पर आधारित हैं, या केवल लाभ की आशा से अंध-अनुसरण का परिणाम हैं।

प्राचीन भारतीय परंपरा में प्रकृति को सदैव माता माना गया है। गोवर्धन पूजा इस सनातन सत्य को पुनर्जीवित करती है कि मनुष्य प्रकृति से अलग नहीं है। आज हम जिस जलवायु संकट का सामना कर रहे हैं, उसका मूल कारण यही है कि हमने स्वयं को 'इंद्र' मान लिया है — प्रकृति का स्वामी। हमने पहाड़, नदियों और जंगलों को केवल संसाधन समझा, न कि जीवन का आधार। गोवर्धन पूजा हमें याद दिलाती है कि पहाड़ और जंगल, जो प्रकृति के प्रतीक हैं, उनकी पूजा करके ही हम वास्तव में अपना जीवन सुरक्षित रख सकते हैं।

गोवर्धन पर्वत वास्तव में पारिस्थितिक तंत्र का प्रतीक है। यह एक अत्यंत व्यावहारिक और वैज्ञानिक तथ्य है कि मानव जीवन प्रकृति के संसाधनों के बिना संभव नहीं है। आधुनिक समाज ने इंद्र की तरह प्रकृति का उपभोग किया है, उसे अपना सेवक माना है, जिसका परिणाम जलवायु परिवर्तन और पारिस्थितिक असंतुलन के रूप में सामने आया है। यह पूजा अतीत की महिमा के लिए नहीं, बल्कि वर्तमान के कर्तव्य के लिए है। यह हमें उपभोक्तावाद के दर्शन से मुक्त कर कृतज्ञता और सहभागिता के दर्शन की ओर ले जाती है। गोवर्धन पर्व हमें सिखाता है कि मनुष्य प्रकृति से अलग नहीं है; हम दोनों एक ही अस्तित्व के दो पहलू हैं। इस अद्वैत बोध को वैज्ञानिक रूप से समझने पर ही हम पर्यावरणीय संकट से मुक्ति पा सकते हैं।

गोवर्धन केवल पहाड़ नहीं है। यह 'गो' अर्थात् इंद्रियों की, और 'वर्धन' अर्थात् वृद्धि एवं सुरक्षा का प्रतीक है। हम जिन आंतरिक संपदाओं — ज्ञान और विवेक — की पूजा करते हैं, वही हमारा पोषण करती हैं। कृष्ण ने केवल पहाड़ की पूजा नहीं करवाई, बल्कि अन्नकूट का भोग लगवाया। अन्नकूट में विभिन्न खाद्य पदार्थों का मिश्रण होता है। यह इस बात का प्रतीक है कि जीवन के सभी विरोधाभास — दुख-सुख और विविधताएँ — मिलकर ही एक संपूर्ण और मधुर अनुभव बनाते हैं।

कृष्ण यह संदेश देना चाहते हैं कि जीवन को खंडों में नहीं, बल्कि समग्रता में स्वीकार करना ही सच्चा अध्यात्म है।

अन्नकूट का सार है — भोग को योग में बदलना। जब आप अपनी कमाई या अपने भोजन को ईश्वर (सत्य) के लिए समर्पित करते हैं और उसे सबके साथ बाँटते हैं, तो वह भोजन केवल पेट भरने का साधन नहीं रहता, बल्कि चेतना को ऊँचा उठाने का माध्यम बन जाता है।

जब इंद्र ने क्रोध में आकर मूसलाधार वर्षा की, तो कृष्ण ने छोटी उंगली पर गोवर्धन पर्वत को उठा लिया। यह घटना भौतिक चमत्कार से कहीं अधिक आत्मिक पराक्रम का प्रतीक है। गोवर्धन को उठाना वास्तव में मन को थामने का प्रतीक है।



इंद्र का क्रोध जीवन के उन तूफानों का प्रतीक है — अचानक आने वाले दुःख, आपदाएँ, असफलताएँ या भय। आज का मनुष्य इन तूफानों के सामने मानसिक रूप से टूट जाता है, डिप्रेशन और तनाव में डूब जाता है।

कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को अपनी सबसे छोटी उंगली पर उठाया। सबसे छोटी उंगली साधन-विहीनता और अहंकार-शून्यता का प्रतीक है। इसका अर्थ है कि जब आपका मन रूपी पर्वत आपकी चेतना रूपी उंगली के अधीन होता है, तब आप जीवन के बड़े से बड़े तूफान को भी शांत, सहज और अहंकार-रहित होकर थाम लेते हैं।

गोवर्धन कथा का यह भाग मनोविज्ञान का सार है। यह हमें सिखाता है कि बाहरी परिस्थितियों (इंद्र का क्रोध) पर हमारा नियंत्रण नहीं है, पर हम अपने आंतरिक केंद्र (कृष्ण) को मज़बूत कर सकते हैं। जब हमारा आंतरिक केंद्र दृढ़ होता है, तो बाहरी दबाव (पहाड़ का बोझ) भी हमें विचलित नहीं करता। यही ध्यान और जागरूकता की शक्ति है।

जब कृष्ण ने गोवर्धन की पूजा करवाई, तो इंद्र क्रोधित हुआ और उसने विनाशकारी वर्षा की। इंद्र का यह गुस्सा अहंकार का प्रतीक है। जब हम अपनी पुरानी मान्यताओं, ईर्ष्या और दंभ को चुनौती देते हैं, तो मन इसी प्रकार क्रोध और प्रतिरोध से भर जाता है। गोवर्धन को उठाना उस आंतरिक बल का प्रतीक है, जो विरोध के बावजूद सत्य को थामे रखता है। हमें अपने भीतर के 'इंद्र' को शांत कर 'विवेक' अर्थात् कृष्ण की शरण लेनी चाहिए। गोवर्धन पूजा हमें बाहरी प्रदर्शनों से हटाकर आंतरिक ईमानदारी और अस्तित्व के प्रति गहरी कृतज्ञता की ओर ले जाती है।

गोवर्धन पूजा की प्राचीन परंपरा की आधारभूत उपयोगिता आज के बौद्धिक और तार्किक समाज के लिए अपरिहार्य है। यह पर्व हमें सिखाता है कि नेतृत्व भय या लालच पर नहीं, बल्कि सत्य और कर्तव्य पर आधारित होना चाहिए। कृष्ण का गोवर्धन उठाना जनता के लिए खड़ा होने की सबसे बड़ी अभिव्यक्ति है — जो आधुनिक नेताओं के लिए भी एक स्पष्ट निर्देश है। इंद्र और गोवर्धन का द्वंद्व मनुष्य के मन में चल रहे अज्ञान और ज्ञान के शाश्वत संघर्ष का प्रतीक है। जो व्यक्ति सच्चाई की पूजा करता है, वह अंधकार की शक्ति से नहीं डरता। गोवर्धन पूजा हमें मानसिक दृढ़ता और अखंड विवेक के साथ जीवन जीने की प्रेरणा देती है।

यह केवल एक उत्सव नहीं, बल्कि चेतना को जागृत करने का एक दार्शनिक और वैज्ञानिक मार्ग है। यह हमें सिखाती है कि अहंकाररूपी इंद्र को पहचानो और त्यागो; गोवर्धन की पूजा सिखाती है कि प्रकृति — यानी जीवन के आधार — को सम्मान दो; गिरिधारण सिखाता है कि मन को थामकर जीवन के तूफानों का सामना करो; और अन्नकूट सिखाता है कि उपभोगवाद छोड़कर सामूहिक समरसता और त्याग को अपनाओ।

गोवर्धन पूजा हमें सिखाती है कि हमारी सच्ची सुरक्षा किसी बाहरी शक्ति या भौतिक धन में नहीं, बल्कि हमारे विवेक, करुणा और प्रकृति के साथ हमारे संतुलित संबंध में निहित है। यही वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण है जो प्राचीन परंपरा को कालातीत सत्य में बदल देता है — और यही गोवर्धन पूजा का सार है।

दीपावली : गणेश-लक्ष्मी पूजन एवं वैज्ञानिक आयाम



सुखपाल सिंह

M.A(HINDI)B.ED- 1990-91

परिचय

32 साल से हिंदी विषय में पठन-पाठन तथा लेखन-कार्य।
काव्यमंच- मेघदूत से समय-समय पर सम्मान-पत्र, केन्द्रीय विद्यालय
संगठन से समय-समय पर योग्यता प्रमाण-पत्र, अमर-उजाला
समाचार-पत्र से अनेक अवसरों पर प्रशंसा-पत्र
लेखन के साथ-साथ, हिंदी- साहित्य पठन-पाठन में रूचि।
विशेषतः 1950 के बाद का हिंदी साहित्य। दलित-साहित्य एवं 'पहल'
सामाजिक संस्था से जुड़ाव।

अमावस की वह गहरी रात,
जब तम ने सबको घेरा था,
एक दीया मुस्काया धीमे-से,
मानो आशा का दीपक था।

दीपक में जो घी जलता है,
उससे वायु शुद्ध हो जाती,
प्रज्वलन से ऊर्जा प्रवाहित,
जड़ चेतना तक पहुँच जाती।

दीप जले तो मन में उजियारा,
अज्ञान तिमिर सब दूर हुआ,
संस्कारों की ज्योति जली,
हर घर में सच्चा नूर हुआ।

लक्ष्मी पूजन, धन का संदेश,
पर श्रम का भी सम्मान वही,
जहाँ परिश्रम का दीप जले,
वहीं बसती भगवान वही।

लक्ष्मी आई समृद्धि लेकर,
गणेश अग्र में बुद्धि लिए,
शुचिता ने ले लिया रूप नया,
विज्ञान भी संग चल दिया।

गणेश पूजन का अर्थ यही,
ज्ञान से मन को शुद्ध करो,
अंधभक्ति में मत खो जाओ,
तर्क की लौ से बोध भरो।

मिट्टी का दीप, कार्बन घटाए,
शुद्ध करे वातावरण,
तेल की लौ से ऑक्सीजन बढ़े,
जगे नवजीवन, नवल किरण।

पटाखों की गूँज में भी संदेश,
ध्वनि से कीट-पतंग भागे,
पर संयम रखो इस उल्लास में,
न प्रकृति के साज बिगाड़े।



दीपावली केवल पर्व नहीं,
यह मन का उत्सव, चेतन है,
अंधकार से प्रकाश की यात्रा,
जीवन की सच्ची साधन है।

दीपक केवल मिट्टी नहीं,
यह प्रतीक आत्मा का है,
बाती जैसे अंतर्मन की,
तेल तपस्या की भाषा है।

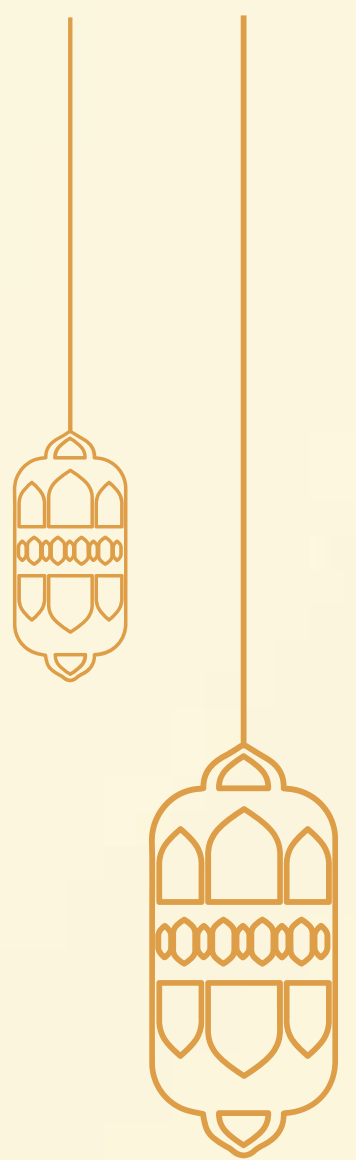
लक्ष्मी का आगमन तभी,
जब स्वच्छ मन के द्वार खुलें,
सफाई, सादगी, सद्भाव से,
घर-आँगन में सुमन खिलें।

विज्ञान कहे — प्रकाश से
जीवाणु नष्ट, रोग मिटे,
सत्य कहे — उजियारे से
मन के संशय भी सिमटें।

एक दीया जब साथ जले,
दूसरे दीये को टोक न दे,
ज्योति बाँटने से ही बढ़ती,
यही दीपावली सीखा दे।

लक्ष्मी का अर्थ धन नहीं,
संस्कृति का वैभव भी है,
गणेश का अर्थ बुद्धि नहीं,
विवेक का प्रभाव भी है।
मिलजुल कर जब दीप जलाएं,
तो स्वार्थ तमस मिट जाता है,
प्रेम की गंगा बह पड़ती है,
भारत फिर जगमगाता है।

अंत में एक ही संदेश,
जो मन के दीप जलाएगा,
वह हर अमावस में भी,
अपना सूरज पा जाएगा।



काव्य गोष्ठियां



दाक्षी परिवार
की

अनौपचारिक बैठक एवं काव्य गोष्ठी

महान कवि रबीन्द्रनाथ ठाकुर जी की जयंती के उपलक्ष्य में

आप सभी अपेक्षित हैं,
संगीत, बातें और कविताओं
के साथ !

दिनांक :- 7 मई 2025
समय :- सायं 7 बजे से
माध्यम :- गूगल मीट



कृतिका रस्तोगी
(चंडीगढ़)



अक्षित कुमार भदौरिया
(ग्वालियर, मध्यप्रदेश)

आपेक्षित कवि



दिशा सिंह
(बुलंदशहर, उत्तरप्रदेश)



निहारिका
(अलवर, राजस्थान)



नयन चक्रवर्ती
(हुगली, प.बंगाल)



आकाश तिवारी
(बिलासपुर, छत्तीसगढ़)



कर्तव्य "जय"
(एटा, उत्तरप्रदेश)



सोनाली कुमारी
(नालंदा, बिहार)



प्राची दाधीच
(सीकर, राजस्थान)



दीक्षा
(दिल्ली)



सोनल गुप्ता
(अयोध्या, उत्तरप्रदेश)



मोनिका दाधीच
(सीकर, राजस्थान)



अनिकेत नारायण
(मुजफ्फरपुर, बिहार)



दाक्षी परिवार
की

अनौपचारिक बैठक एवं काव्य गोष्ठी

महान कवि जयशंकर प्रसाद जी की जयंती के उपलक्ष्य में

आप सभी अपेक्षित हैं,
संगीत, बातें और कविताएं !

दिनांक :- 30 जनवरी 2025
समय :- सायं 7 बजे से
माध्यम :- गूगल मीट

आपेक्षित कवि



दिशा सिंह
(उत्तरप्रदेश)



निहारिका
(अलवर, राजस्थान)



अक्षित कुमार भदौरिया
(ग्वालियर, मध्यप्रदेश)



कृतिका रस्तोगी
(चंडीगढ़)



कर्तव्य प्रताप सिंह
(एटा, उत्तरप्रदेश)



लोकेश कुमार
(जोधपुर, राजस्थान)



अनीषा सिंह
(देवरिया, उत्तरप्रदेश)



नयन चक्रवर्ती
(हुगली, प.बंगाल)



आकाश तिवारी
(बिलासपुर, छत्तीसगढ़)



अमरजीत मिश्रा
(आरा, बिहार)

दाक्षी साहित्य परिषद् ने वर्षभर में विविध साहित्यिक गतिविधियों का आयोजन किया। परिषद् द्वारा जयशंकर प्रसाद, रविन्द्रनाथ ठाकुर और मुंशी प्रेमचंद जैसे महान लेखकों की जन्मजयंती के उपलक्ष्य में विशेष काव्य गोष्ठियों का आयोजन किया गया, जिनमें स्थानीय तथा आमंत्रित कवियों ने अपनी रचनाओं का पाठ किया। इन कार्यक्रमों के माध्यम से भारतीय साहित्यिक परंपरा के विविध आयामों पर चर्चा हुई और नवोदित लेखकों को भी मंच प्रदान किया गया। परिषद् ने वर्षभर में साहित्य, समाज और संस्कृति को जोड़ने वाले कई संवाद सत्र, लेख प्रतियोगिताएं और पुस्तक विमोचन समारोह भी आयोजित कर साहित्यिक चेतना को समृद्ध किया।

काव्य प्रतियोगिता



हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित हिंदी परववाड़े के दौरान दाक्षी साहित्य परिषद् और राजभाषा समिति हिंदी विभाग, शिवाजी महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय के संयुक्त प्रयास से स्वरचित कविता पाठ प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। यह कार्यक्रम अत्यधिक सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। इस अवसर पर दाक्षी के निदेश अक्षित कुमार भदौरिया, शिवाजी महाविद्यालय के प्रधानाचार्य प्रो. वीरेंद्र भारद्वाज जी, नोडल अधिकारी डॉ. तरुण जी और हिंदी विभाग की प्रभारी प्रो. राजकुमारी जी की उपस्थिति रही।

दाक्षी साहित्य परिषद

दाक्षी साहित्य परिषद् दाक्षी आंदोलन का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक प्रकोष्ठ है, जो सृजनशील अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित करते हुए भारतीय ज्ञान परंपरा के सार को साहित्य के माध्यम से प्रसारित करता है।

यह मंच लेखकों, कवियों और चिंतकों को परंपरा और आधुनिकता के संगम से जुड़े विचारों की खोज, अभिव्यक्ति और संवाद का अवसर प्रदान करता है।

दाक्षी साहित्य परिषद् का उद्देश्य साहित्य को केवल रचनात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित न रखकर उसे भारतीय बौद्धिक परंपरा, दर्शन और संस्कृति का माध्यम बनाना है — जहाँ शब्द साधना बनते हैं, और साहित्य आत्मा से समाज तक संवाद रचता है।

यह परिषद् उस जीवंत धारा का प्रतीक है जो भारतीय संस्कृति की गहराइयों से प्रेरणा लेकर नवोन्मेषी विचारों को स्वर देती है, ताकि साहित्य के माध्यम से "संस्कृति ज्ञान की" का संदेश हर मन तक पहुँचे।

दाक्षी

दाक्षी एक ऐसा आंदोलन है जो भारत की शाश्वत ज्ञान परंपराओं को अनुसंधान, आलोचनात्मक चिंतन और सांस्कृतिक पहल के माध्यम से पुनर्जीवित करने के लिए समर्पित है।

"संस्कृति ज्ञान की" इस सूत्रवाक्य से प्रेरित होकर, यह प्राचीन ज्ञान और आधुनिक विचार के बीच एक सेतु का कार्य करता है, जिससे हमारी विरासत न केवल सुलभ बने, बल्कि रूपांतरणकारी भी सिद्ध हो।

दाक्षी का उद्देश्य केवल अतीत का गौरव पुनःस्थापित करना नहीं, बल्कि उस ज्ञान को आज के युग की आवश्यकताओं से जोड़ना है — ताकि भारत की दार्शनिक दृष्टि, वैज्ञानिक परंपरा और सांस्कृतिक विमर्श पुनः समाज के केंद्र में स्थापित हो सके।

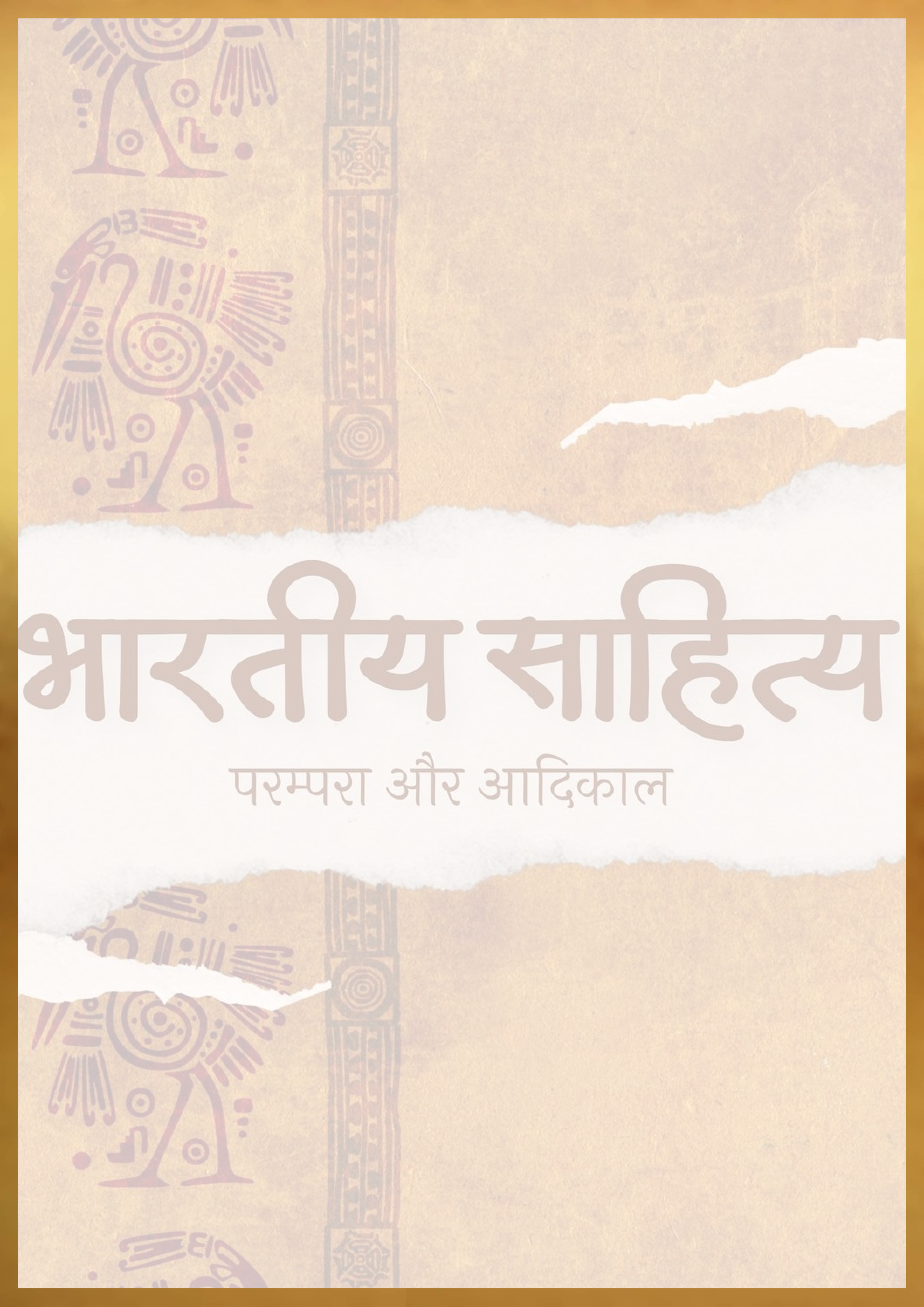
यह मंच युवा पीढ़ी को अपनी जड़ों से जोड़ते हुए उन्हें वैश्विक परिप्रेक्ष्य में सोचने, प्रश्न करने और सृजन करने के लिए प्रेरित करता है।

दाक्षी इस विश्वास पर आधारित है कि जब संस्कृति ज्ञान में रूपांतरित होती है, तभी सभ्यता दीर्घजीवी बनती है — और यही "संस्कृति ज्ञान की" का वास्तविक अर्थ है।

अगले अंक पर रचना भेजने के लिए

ईमेल: dakshimovement108@gmail.com

वेबसाइट : <https://www.dakshimovement.in/>

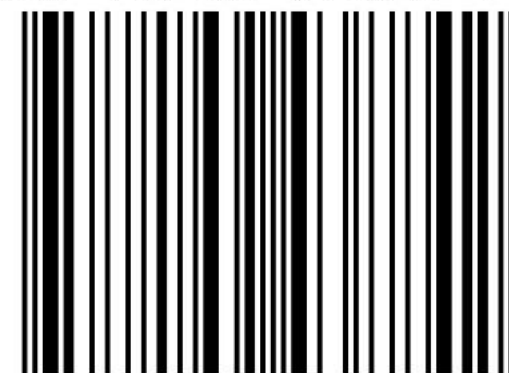


भारतीय साहित्य

परम्परा और आदिकाल



ISBN 978-81-994388-4-2



9 788199 438842